भारतीय ग्रामीण समाज की शक्ति संरचना का परिवर्तित स्वरूप

डॉ. अंजू बाला शर्मा,

अवधारणात्मक एवं सैद्धान्तिक विवेचन

आधुनिक उपलब्धियों तकनीकि विकास सुख सुविधाओं के भौतिक साधनों एवं विश्व की महाशक्ति बनने की ओर अग्रसर होने के बावजूद भी भारत गांवों का देश समझा जाता है विश्व की अधिकांश जनसंख्या गांवों में निवास करती है।

किसी भी समाज में चाहे वह ग्रामीण हो या नगरीय उसकी एक सामाजिक संरचना होती है और यह संरचना विभिन्न अंगों से मिलकर बनी होती है। प्रत्येक अंग के अलग अलग कार्य होते है। लेकिन फिर भी उनमें एक प्रकार्यात्मक सम्बंध पाया जाता है और यही प्रकार्यात्मक सम्बंध व्यवस्थित व संगठित होकर एक ढांचे का निर्माण करता है और यह ढांचा ही सामाजिक संरचना कहलाता है। इस प्रकार सामाजिक संरचना को सही ढंग से चलाने के लिये विभिन्न अंगो में कार्यों का बंटवारा कर दिया जाता है। व इन्हीं कार्यों की विशिष्ट क्रमबद्वता को पारसंस ने सामाजिक संरचना कहा है।

भारतीय गांवों की सामाजिक संरचना के अध्ययन समय–समय पर समाजशास्त्रीयों द्वारा किये गये जिनमें दुबे, श्रीनिवास, योगेन्द्र सिंह, रामकृष्ण मुखर्जी, आन्द्रे बेताई, बी.आर.चौहार आदि प्रमुख है।

हर समाज में चाहे वह ग्रामीण हो या नगरीय सभी में शक्ति–सम्बन्धित स्तरीकरण पाया जाता है। प्रत्येक समाज की सामाजिक संरचना में कार्यों का बंटवारा सामाजिक स्तरीकरण के आधार पर होता है। प्रत्येक समाज में पद के अनुसार शक्ति का विभाजन होता है अतः किसी भी समाज में व्यवस्था को बनाये रखने के लिये यह जरूरी है कि समाज में प्रभुता व अधीनता के सम्बंध हो अर्थात् जहां प्रभुत्व शाली व्यक्ति को आदेश देने के अधिकार हैं वही अधीनस्थ व्यक्तियों का कर्त्तव्य है कि उन आदेशों का पालन करें और यहीं प्रभुत्व व अधीनता के सम्बंध अधिकार व कर्त्तव्य से जुड़े होते है और इसी से सामाजिक व्यवस्था को बनाये रखना सम्भव है।

प्रभुत्व व अधीनता सामाजिक स्तरीकरण का आधार है प्रभुत्व शाली व्यक्ति वह है जिसके पास शक्ति है जिसे आदेश देने का अधिकार है व स्तरीकरण में उसका सर्वोच्च स्थान है जिसके पास शक्ति नहीं है वह उन आदेशों का पालन करता है। अर्थात् समाज में उसका स्थान आदेश देने वाले की तुलना में निम्न है। स्तरीकरण के भिन्न भिन्न आधार होते है। ड्यूमा पोकॉक ने जाति–धर्म को सामाजिक स्तरीकरण का आधार माना है उन्होंने यह स्पष्ट किया है कि जाति व्यवस्था का धर्म व पवित्रता से घनिष्ठ सम्बंध है। गांवों में भी जाति व धर्म के आधार पर स्तरीकरण देखा जाता है। जाति के अंतर्गत ब्राह्मण का स्थान सर्वोच्च होता है। क्यों कि वही ग्रामीण समाज के धार्मिक कार्यों को सम्पन्न करवाता है। प्रो. योगेन्द्र सिंह ने जाति व वर्ग को स्तरीकरण का प्रमुख आधार माना है उन्होंने स्पष्ट किया है कि जाति व वर्ग स्तरीकरण में साथ–साथ चलते है जहां जाति के अंतर्गत ब्राह्मण का सर्वोच्च स्थान होता है वही वर्ग में पूंजी के स्वामी का स्थान सर्वोच्च होता है। ग्रामीण समाजों में स्तरीकरण के यह आधार आज भी विद्यमान है जाति व्यवस्था के अंतर्गत ब्राह्मण, क्षेत्रीय, वेश्व,शुद्र चार जातियों में ब्राह्मण का स्थान सबसे उच्च होता है व अन्य जातियों को स्तरीकरण में निम्न स्तर पर रखा जाता है इसी प्रकार वर्ग व्यवस्था में मालिक व मजदूर दो वर्ग होते है मालिक का स्थान उच्च व मजदूर का निम्न होता है आज भी ग्रामीण समाजों में स्तरीकरण के यह आधार पाये जाते हैं।

ग्रामीण शक्ति संरचना

शक्ति–संरचना सामाजिक संरचना का एक आधार है क्योंकि शक्ति को समझे बिना किसी भी समाज की संरचना को समझना सम्भव नहीं है जिसके पास शक्ति होती है वही समाज की संरचना का निर्णायक रूप देता है।

शक्ति संरचना तथा सामाजिक संरचना की बीच घनिष्ट सम्बंध है। शक्ति संरचना को राजनीतिक संरचना से पृथक करके ही

पारसंस ने इसके सामाजिक महत्व का विश्लेषण किया है। भारतीय गांवों में प्राचीन काल से ही सामाजिक शक्ति के आधार पर व्यक्ति की प्रस्थिति का निर्धारण होता रहा है। यह सच है कि परम्परागत रूप सामाजिक शक्ति के निर्धारण में अर्जित प्रस्थिति की अपेक्षा प्रदत्त प्रस्थिति का महत्व अधिक था लेकिन फिर भी शक्ति का यह संस्थात्मक स्वरूप भारत के ग्रामीण जीवन को लम्बे समय तक प्रभावित करता रहा है।

शक्ति को सामान्य अर्थ में स्पष्ट करते हुये कहा जा सकता है कि "सामाजिक शक्ति वह सामान्यीकृत क्षमता है जिसके द्वारा शक्ति रखने वाला व्यकित या समूह दूसरों से उनकी इच्छाओं के विपरित भी कार्य करवा लेता है।" चिताम्बर "ने व्यक्ति की स्थिति का प्रभावित करने वाली शक्ति की तुलना समुद्र की धाराओं से की है।" जो समय–समय पर ग्रामीण तथा नगरीय जन समूह रूप जल को किसी दिशा में बढ़ाती रहती है। इसका तात्पर्य यह है कि किसी भी समुदाय में व्यक्ति अथवा समूह की स्थिति को वहां की शक्ति–संरचना से पृथक करके स्पष्ट नही किया जा सकता है। समुदाय में विद्यमान शक्ति का स्वरूप किसी एक विशेष व्यक्ति में निहित हो सकता है। अथवा सम्पूर्ण समूह में यह शक्ति किसी संस्कृति में निषेधात्मक होती है। तो किसी में स्वीकारात्मक भारतीय ग्रामीण समाजों में व्यक्ति का स्वरूप स्वीकारात्मक हो रहा है। जो विभिन्न दशाओं में व्यक्ति के सामने अनेक विकल्प रखकर उसे अपने लक्ष्यों को पूरा करने की प्रेरणा देती है। शक्ति–संरचना कभी भी स्वंय में स्वतंत्रता नहीं देती । एक अवधारणा के रूप में शक्ति का सम्बंध एक विशेष प्रस्थिति तथा उससे सम्बंधित भूमिका के निर्वाह से है। अव्यक्त रूप से शक्ति के आधार परम्परा कानून अथवा करिशमा हो सकते है। लेकिन व्यवहारिक रूप में शक्ति प्रस्थिति तथा भूमिका से सम्बंधित होती है। जिसे अन्य व्यक्तियों द्वारा स्वीकार किया जाता है। भारतीय ग्रामीण शक्ति–संरचना का विश्लेषण भी इसी दृष्टिकोण के आधार पर किया जाता है। जैसा कि चिताम्बर "ने कहा कि ग्रामीण समाज में प्रभाव का प्रतिमान सम्पूर्ण शक्ति संरचना और नेतृत्व में देखा जा सकता है।" हार्टन व हण्ट "के मतानुसार शक्ति दूसरों की कियाओं को नियंत्रित करने की क्षमता है।" इसका तात्पर्य है कि व्यक्ति चाहे किसी भी स्थिति में हो वह दूसरों के व्यवहारों को जिसे हद तक नियंत्रित कर लेता है वह उतना ही अधिक शक्ति सम्पन्न होता है।

इसी प्रकार वेबर ने भी शक्ति को परिभाषित करते हुये कहा है कि के एक व्यक्ति या अनेक व्यक्तियों द्वारा इच्छा को दूसरों पर कियान्वित करने अथवा दूसरे व्यक्तियो द्वारा विरोध करनें पर भी उसे पूर्ण कर लेने की स्थिति को कहते है"

उपयुक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि शक्ति किसी व्यक्ति अथवा समूह में निहित एक ऐसी क्षमता है जिसके द्वारा शक्ति धारण करने वाला व्यक्ति अथवा समूह दूसरों की इच्छा न होते हुये भी उन्हें अपनी इच्छानुसार व्यवहार करने को बाध्य करता है और सभी निर्णय अपने ही पक्ष में करा लेने में सफल हो जाता है। इस संदर्भ में यह महत्वपूर्ण है कि प्रत्येक समाज में कुछ व्यक्ति अथवा समूह अपनी कुछ विशेष योग्यता के आधार पर इतनी शक्ति प्राप्त कर लेते है कि वह उसका कभी भी प्रभाव पूर्ण ढंग से उपयोग कर सकें। अतः यहां पर मार्क्स "का यह कथन सत्य प्रतीत होता है कि "शक्ति संरचना का सिद्वांत बड़ा बेढब है जिसके पास शक्ति होती है वही समाज की संरचना को निर्णायक रूप देता है।"

समाज में प्रभाव का यह प्रतिमान एक ऐसी व्यवस्था का निर्माण करता है जो एक विषय से सम्बन्धित निर्णय लेने वाले व्यक्तियों एवं समूहों को परस्पर सम्बद्ध करता है। जो व्यक्ति अथवा समूह औपचारिक अनौपचारिक रूप से समाज पर अपना प्रभाव रखते है वे ही समाज की शक्ति संरचना का निर्माण करते है।

वेबर "के मतानुसार शक्ति सामाजिक सम्बन्धों का वह पहलू है जिसका सम्बन्ध एक व्यक्ति द्वारा दूसरे के आचरण पर अपनी इच्छा थोपने की सम्भावना से है।"

शक्ति दो रूपों में देखी जा सकती है एक प्रभाव के रूप में और दूसरी सत्ता के रूप में। दूसरों के व्यवहार तथा निर्णयों को बिना किसी सत्ता के प्रभावित करने की क्षमता को हम प्रभाव कह सकते है। जबकि सत्ता से एक वैद्य शक्ति का बोध होता है जो व्यक्ति को विशेष पद पर आसीन होने के कारण प्राप्त होती है। सत्ता में आदेश का भाव निहित है जबकि प्रभाव को आत्म–बोध से सम्बद्व किया जा सकता है।

सत्ता तीन प्रकार की होती है। परम्परागत, वैधानिक, चमत्कारिक परम्परागत सत्ता जो कि प्रदत्त होती है। यह व्यक्ति को परम्परागत रूप से प्राप्त होती है। वैधानिक सत्ता जो कि अर्जित होती है इसे व्यक्ति अपनी गुण व योग्यता के आधार पर प्राप्त

करता है। चमत्कारिक सत्ता–वह सत्ता जिसमें व्यक्ति के पास विलक्षण शक्ति अथवा करामात होती है। अर्थात् भारतीय गांवों में परम्परागत व चमत्कारिक सत्ता का स्वरूप पाया जाता है।

इस प्रकार प्रत्येक समुदाय में कुछ ऐसे व्यक्ति होते है जिनमें सत्ता आधारित शक्ति निहित होती है। ऐसे व्यक्ति समुदाय के निर्णयों तथा व्यक्तिगत व्यवहार प्रतिमानों को निर्धारित करने में अहम् भूमिका निभाते है। किसी समूह में इस शक्ति का विस्तार किस वर्ग में होगा तथा शक्ति सम्पन्न व्यक्तियों व अन्य व्यक्तियों के बीच सम्बंधों की प्रवृति किस प्रकार की होगी इसी आधार पर किसी समूह में एक विशेष शक्ति संरचना का निर्माण होता है इसी से ग्रामीण समुदाय की संरचना भिन्न होने के कारण वहां शक्ति संरचना की विशेषतायें भी भिन्न प्रकार की होती है।

ग्रामीण शक्ति संरचना में समय के साथ–साथ परिवर्तन आया। पूर्व स्वतन्त्रता काल में ग्रामीण शक्ति संरचना का जो स्वरूप था वह स्वातत्तयोत्तर काल में जनतांत्रिक विकेंद्रीकरण की प्रकिया के कारण अविकल परिवर्तित हो रहा है। अतएव ग्रामीण शक्ति संरचना के बदलते हुये स्वरूपों को दो रूपों एक परम्परागत तो दूसरा आधुनिक स्वरूप के आधार पर समझा जा सकता है।

ग्रामीण शक्ति संरचना के परम्परागत स्वरूप के मुख्य आधार जमींदारी प्रथा ग्राम पंचायत तथा जाति पंचायत थे। जमींदारी प्रथा एवं ग्रामीण शक्ति संरचना के अन्तसम्बंधों की व्यवस्था का मुख्यतः सम्पत्ति भूमि अधिकार पर निर्भर थी। गांव के आर्थिक संसाधानों का बड़ा स्वामी होने के कारण जमींदार शक्ति सम्पन्न होता था। उसकी सत्ता प्रायः पैतृक व स्थानीय होती थी। इस प्रकार भूस्वामित्व के इस विशेष स्वरूप ने परम्परागत शक्ति संरचना को एक विशेष स्वरूप प्रदान किया। जिसमें शक्ति का केंद्रीयकरण देखने को मिलता है। गांवों में शक्ति का दूसरा स्वरूप ग्राम पंचायतों में निहित था यद्पि सम्पूर्ण भारत में ग्राम पंचायतो का संगठन समान प्रकृति का नहीं था किन्तु फिर भी पंचायतें ही इस तथ्य को निर्धारित करती थी कि गांव में विभिन्न व्यक्तियों के अधिकार क्या होंगे। ग्राम पंचायतों के अधिकार ही ग्रामीण शक्ति संरचना के वास्तविक अधिकार थे। यह संगठन गांवों मे कानून और व्यवस्था स्थापित करने के साथ–साथ ग्रामीणों को न्याय भी दिलाते थे। सैद्धान्तिक स्तर पर शक्ति संरचना में पंचायतों का स्थान सर्वोपरी था। परंतु व्यवहारिक रूप पंचायत की शक्ति प्रायः भूस्वामियों में ही निहित थी ग्रामीण शक्ति संरचना का तीसरा आधार जाति पंचायतें थी जाति पंचायत एक जाति विशेष की वह शक्तिशाली इकाई थी जो एक विशेष क्षेत्र में अपने जाति के सदस्यों के व्यवहारों का निर्धारण करती थी व जातिय नियमों का उल्लंघन करने वाले को दंण्डित भी करती थी। इस प्रकार जातिय पंचायतों में विधायिका तथा न्यायपालिका दोनों के ही अधिकार निहित थें।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि परम्परागत ग्रामीण शक्ति संरचना का निर्माण कुछ सीमित लोगों से ही होता रहता था। यद्यपि ग्राम पंचायतों के माध्यम से शक्ति के विकेन्द्रीयकरण का प्रयास अवश्य किया गया लेकिन स्वतंत्रता के पूर्व तक ग्राम पंचायतें व्यवहारिक रूप से जमींदारों की हित साधना का ही माध्यम थी उनमें स्वतन्त्र रूप से कोई निर्णय लेने की क्षमता नहीं थी। जाति पंचायतों के मुखिया भी जमींदारों की इच्छाओं की अवहेलना नहीं कर पाते थें। ग्रामीण शक्ति संरचना के परम्परागत रूप से सम्बन्धित विशेषताओं को संक्षेप मे निम्नांकित रूप से समझा जा सकता है।

ग्रामीण शक्ति संरचना जिन व्यक्तियों समूहों से सम्बंद्व थी उनकी शक्ति का स्वरूप मुख्यतः आनुवांशिक था। शक्ति का संरचरण जमींदार से उसके पुत्र को ही नहीं होता था। बल्कि गांव पंचायत जाति पंचायत के मुखिया का पद भी प्रत्यक्ष रूप से आनुवांशिक था। यह शक्ति संरचना निरंकुशता की विशेषता से युक्त थी। इसका तात्पर्य है कि जिस व्यक्ति को अपने समूह में एक विशेष प्रस्थिति प्राप्त होती थी वह उसका प्रयोग बिना किसी बाधा के स्वतन्त्रता पूर्वक अपने हितों को सुरक्षित रखने के लिये करता था। ग्रामीण शक्ति संरचना में जाति संस्तरण का प्रभाव स्पष्ट रूप से विद्यमान रहा है। निम्न जाति के लोगों को शक्ति संरचना में कभी भी महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त नहीं हो सका।

वैयक्तिक शक्ति के निर्धारण में भूस्वामित्व तथा परिवार की प्रतिष्ठा का विशेष स्थान था इसका तात्पर्य है कि छोटे जमींदारों की अपेक्षा बड़ें जमींदारों की शक्ति अधिक थी। गांव पंचायत का मुखिया भी वही व्यक्ति बनता था जिसके पास बड़ी भूमि होती थी।

ग्रामीण शक्ति संरचना एक लम्बी अवधि तक सामाजिक संरचना का भी आधार रही। जिस व्यक्ति समूह में गांव की शक्ति निहित थी उसी के निर्देशों के आधार पर जातिगत, व्यावसायिक तथा धार्मिक व्यवहारों का निर्धारण किया जाता था। अंत में परम्परागत ग्रामीण शक्ति संरचना के अन्तर्गत सत्ता का तत्व प्रभाव की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण था इसका अभिप्राय है कि

व्यक्ति की शक्ति रखने वाले व्यक्ति का ग्रामीणो पर कोई आन्तरिक प्रभाव नहीं होता था। यही कारण है कि भारत में स्वतन्त्रता के पश्चात जैसे ही शक्ति सम्पन्न लोगों की वैधानिक एवं प्रथागत सत्ता समाप्त हुई सामान्य ग्रामीणों पर उनका प्रभाव बहुत तेजी से समाप्त होने लगा।

सम्बधित साहित्य की समीक्षा

बी.एस. कोहन के अध्ययन The Changing Status of Depressed caste और Madhopur Revisited अध्ययन ए.आर. देसाई द्वारा सम्पादित पुस्तक Rural Sociology in Indian में प्रकाशित हुये है उन्होंने जोनपुर जिले की 23 जातियों का अध्ययन शक्ति संरचना के संदर्भ में किया और पाया कि गांव की शक्ति संरचना आर्थिक एवं संख्यात्मक शक्ति के बीच झूल रही है।

राम कृष्ण मुखर्जी ने अपनी पुस्तक The Dynamics of Rural Socity में लिखा है कि भारतीय गांवों की राजनैतिक सत्ता को ब्रिटेन सरकार ने अपने हाथों में लिया था ब्रिटेन में औद्योगिक कांति का प्रभाव भारतीय गांवों की अर्थव्यवस्था पर भी पड़ा आर्थिक व्यवस्था में भारतीय परिवर्तन के साथ–साथ शक्ति संरचना में भी परिवर्तन हुये है। इसी प्रकार एम.ए.श्रीनिवास अपनी पुस्तक The Social Structure of Mysore Village में लिया है कि ग्रामीण शक्ति संरचना में उसी जाति का निर्णायक प्रभुत्व होता है जो जाति संख्या मे अधिक हो।

योगेन्द्र सिंह ने पूर्वी उत्तर प्रदेश के छः गांवों का अध्ययन किया उनके अनुसार गांवों की शक्ति आज भी उच्च जातियों वर्गों में केंद्रित है व निम्न जातियां एवं वर्ग संगठित होकर उच्च जातियों एवं वर्गों से शक्ति प्राप्त करने हेतू प्रतिस्पर्धा कर रहे है। इस प्रवृति ने गुट बाद को जन्म दिया है। फलतः ग्रामीण समुदाय में विघटन, सामाजिक तनाव तथा असुरक्षा की भावना उत्पन्न हो गई है।

नवीन ग्रामीण शक्ति संरचना में जिन धर्म निरपेक्ष एवं लोकतांत्रिक मूल्यों की अपेक्षा की गई थी, वे गांवों की मुख्य व्यवस्था एवं शक्ति संरचना में अधिक प्रभाव पूर्ण नहीं बन सकें।

ग्रामीण शक्ति संरचना आज भी विभिन्न जातियों एवं वर्गों की आर्थिक सम्पन्नता एवं भिन्नता के प्रतिमान है गांवों में शक्ति व्यवस्था का झुकाव उन समूहों की ओर है जो ग्रामीणो लोगों की आर्थिक आकांक्षाओं को नियंत्रित करते है। इस प्रकार भविष्य में ग्रामीण शक्ति व्यवस्था की गतिशीलता की दिशा गांवों में होने वाले आर्थिक परिवर्तनों के स्वरूप पर निर्भर करेगी। अपने दक्षिण भारत के ग्राम अध्ययन के आधार पर आन्द्रे बेताई का शक्ति संरचना के बारे मे निष्कर्ष था कि परंपरागत शक्ति संरचना भू– स्वामित्व एवं उच्च अनुष्ठानिक प्रस्थिति पर निर्भर थी। फलतः गांवो में ब्राहम्णों को सर्वोच्च स्थान मिला हुआ था। परंतु वर्तमान में परिवर्तन की नई शक्तियों ने गांव की परंपरागत शक्ति संरचना को बदल दिया है। परंपरागत शक्ति संरचना में प्रदत्त कारकों का महत्व अधिक था किंतु वर्तमान में अर्जित एवं व्यक्तिगत गुणों का महत्व बढ़ा है। जनतांत्रिक व्यवस्था ने संख्यात्मक शक्ति का महत्व बढ़ा दिया है। फिर भी संख्या शक्ति एक मात्र आधार नहीं है जो समूह आकार मे बड़े होने के साथ ही सामाजिक तथा आर्थिक प्रतिष्ठा भी अर्जित कर लेते है। उन्हें ग्रामीण शक्ति संरचना में उच्च स्थान प्राप्त हो जाता है। के. एल. शर्मा. ने राजस्थान के गांवों का अध्ययन करके पाया कि जागीरदार, जमींदार और उनके प्रतिनिधियों के हाथ में सामाजिक आर्थिक व राजनीतिक शक्ति थी। इन गांवों में जाति श्रेष्ठता एवं शिक्षा के कारण ब्राह्मणों का तथा आर्थिक समृद्वि के कारण वेश्य जाति का प्रभाव था परन्तु वे जमींदारों के प्रभाव से मुक्त नहीं थी नवीन व्यवस्था ने गांवों में महत्वपूर्ण परिवर्तनों को जन्म दिया अब निर्वाचित पंचायतों में जागीदारों व जमींदारों के स्थान पर मध्यम समूह की सामाजिक इकाईयां शक्ति प्रदान कर रही है।

जिनमें उच्च जातियों की संख्या अधिक है फिर भी निम्न जातियों के लोग भी ग्रामीण शक्ति संरचना में भागीदार बन रहे है। ग्रामीण समुदाय की सामाजिक संरचना में परिवर्तन तथा आधुनिकीकरण पर एक विश्लेषण प्रस्तुत करते हुये योगेन्द्र सिंह ने ग्रामीण शक्ति संरचना के संदर्भ में कहा है कि अब भी उच्च एवं धनवान लोगों का वर्चस्व है। भू–स्वामित्व अब भी एक महत्वपूर्ण पक्ष बना हुआ है। फिर भी जनतांत्रीय अधिकारों एवं कानूनी सुरक्षा ने कम शक्तिशाली लोगों को शक्ति प्राप्त करने हेतू प्रेरित किया है। इसी प्रकार मैसूर के एक गांव रामपुरा के अध्ययन के आधार पर श्रीनिवास ने पाया कि जनतांत्रिक

विकेंद्रीयकरण के कारण ग्रामीण प्रभुत्वशाली निम्न जातियों को हस्तांतरित हो रही है। ओ.पी. शर्मा ने राजस्थान के कुछ गांवों का अध्ययन करके यह तथ्य स्पष्ट किया कि नवीन पंचायत व्यवस्था ने ग्रामीण शक्ति संरचना के स्वरूप में परिवर्तन करके ही शक्ति व्यवस्था को प्रभावित किया है।

उक्त अध्ययनों में जहां शक्ति संरचना में परिवर्तन का आभास मिलता है। वही परम्पराओं से जुड़ाव भी साथ ही इन अध्ययनों के परिणाम क्षेत्र विशिष्ठ भी है।

ग्रामीण विकास में ग्रामीण शक्ति संरचना की भूमिका

आज ग्रामीण शक्ति – संरचना को विकास के परिप्रेक्ष्य में देखा जाने लगा है। क्यों कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद ग्रामीण शक्ति संरचना के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले आधारों में परिवर्तन आया स्वाधीनता आन्दोलन के दौरान यह अनुभव किया गया कि शक्ति संरचना के परम्परागत आधार गांवों में सामाजिक आर्थिक सम्बन्धों को रूढीवादी व शोषण आधारित बनाने के लिये उत्तरदायी है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद नयी सरकारों ने इन स्वरूपों में परिवर्तन के प्रयास किये। जनतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की दिशा में सबलीकरण की औपाचारिक संस्थागत प्रणाली के रूप में पंचायतराज प्रणाली को लागू किया गया जिसमें सत्ता का त्रिस्तरीय विकेन्द्रीयकरण ग्रामीण पंचायत, पंचायत समिति, जिला परिषद के रूप जमीनी लोकतंत्र को मूर्त रूप देने का सकारात्मक प्रयास किया गया तत्पश्चात जमीदारी प्रथा का उन्मूलन करके मध्यस्थों को समाप्त करते हुये कृषकों को सीधे राज्य के अधिकारा में ला दिया। राजस्थान में यह दोनों कार्य कमशः पंचायतराज अधिनियम 1948 तथा जमीदारी उन्मूलन अधिनियम 1951 के माध्यम से किये गये ग्राम पंचायतों के माध्यम से प्रथम बार गांवों में शक्ति संरचना के व्यवस्थित आधार का सूत्रपात हुआ। व्यस्क मताधिकार ग्रामीण व्यवस्था में स्त्रियों सहित कमजोर तथा उपेक्षित वर्गों की सहभागिता ग्राम पंचायतों की कार्यवाही को लिखित रूप प्रदान करना तथा पंचायतराज की प्रशासनिक तथा न्यायियक व्यवस्था से सम्बन्द्धता ऐसे महत्वपूर्ण कदम थें जिन्होंने ग्रामीण जीवन को नई दिशा प्रदान की । इस प्रकार गांवों में शक्ति संरचना के परम्परागत आधारों में परिवर्तन विकासोन्मुखी इकाईयों के माध्यम से लाया गया।

समाज शास्त्र विभाग
एस.एस.जैन सुबोध पी.जी. कॉलेज

Books

1. Beteille, Andre (1969) "Cast, Class and power" Oxford University Press Bombay.
2. Beteille Andre, (1996) "Cast Class and power Changing Patterns of Stratification in A Tanjore Village" Oxford University Press, Bombay.
3. Chitamber, J.B. "Introductory Rural Sociology " Velley estern Near Delhi 1973.
4. Dube, S.C. (1958) "India's changing Village routledge and Kegan Paul." Ithaca Cornell.
5. Dumont and Pocook. "Contribulion to Indian Sociology, 1978".
6. Ghurye G.S. (1961) "Caste Class and Occupation" Bombay Popular Book, Bombay.
7. Marx., Karl. "Main currents is Sociological Thoughts" 1956.
8. Majumdar D.N. (1958) "Caste and Communication in an Indian Village". Bombay Asia Publishing House Bombay.
9. Mehta, S.R. (1984) "Rural Development Policy Programme" SAGE Pub., New Delhi.
10. Mehta, Sushila (1971) "Social Conftict a Village community,New Delhi.
11. Mills, C.R. (1975) "The Power Elite" Oxford University Press, New York.
12. Mollinga Peter P., Ed. 1 (2000) "Water for food and rural Development Appraches and Initiatives in South Asia" SAGE Pub., New Delhi.

13. Prakash Anand, (1991) "Changing Pattern of Rural Power Structure" Dicovery Publishing House, Delhi.

14. Singh , D.R. (1999) "Panchayat Raj and Rural Organisations Chugh Publications, Allahabad."

15. Srinivas,M.N. (1966) "Social Change in Modern India" Allied Pub., Bombay.

16. Singh, Yogendra, (1977) "Social Stratifications and Change in India." Manohar Publishing, Delhi.

17. Singh, Yogendra. "The changing Power. Structure of Village community A cas study of six village p.p. 669-688, 1977".

18. Sharma, M.L. (1984) "Dynamics of Rural Power Structure" a Study of Rajasthan, Jaipur.

19. Saxena, H.S., (1988) "Changing Agrarian Social Structure in Rural Rajasthan." Classic Pub. House, Jaipur.

20. Talcott, Parsons. "Essays in Sociological Theory" P.P. 89-103.

21. Talcott, Parsons. "Structure and Process in Modern Societies.," 1951.

22. Tiwari, R.T. (1988) "Rural Development in Indian" Aashish Pub., New Delhi.

23. Singh, Y., (2000) "The Changing Power Structure of Village Community- A case study of Six villages in Eastern U.P." in Rural Sociology in India.

24. Weber. Max "The theory of Social Economice Organisation". 1922

Journls:

1. Abraham, R. (1993) "Socio- Economic and Political Status of Panchayats," Kurukshetra Vol. 41, No.4.

2. Arora,S. (1972) "Indian Rural Politicians : Two Phases of Power Economics and Political Weekly, Vol. 7, February."

3. Thakur N.K. 2004,National Institute of Rural Development – A study Epistenic Community "Sociological Bulletin " Vol. 53, November 24.

Magazines / Newspapers

1. Administrative Report 2011 "Rural Development Department of Rajasthan Jaipur"

2. Rajasthan Sojas Magazines Special issue on Panchayati Raj. Information and Public Relation Directorate Secretrait Jaipur 2013.

3. Rajasthan Patrika "Role of Power Rural Structure " Page No. 7 Feb. 2015.

Dainik Bhaskar "Rural Deveplomentand Structure", Page No. 4 Jan. 2016